प्राक्कथन

वेदों का भारतीय संस्कृति में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारतीय संस्कृति का मूलाधार वेद ही हैं। आर्य–परम्परा में सृष्टि के आरम्भ से ही यह तथ्य सुरक्षित रहा है कि वेदवाक् देवीवाक् है। वेद की इस दृढ़ आधारशिला के ऊपर भारतीय धर्म तथा सभ्यता का भव्य प्रासाद प्रतिष्ठित है।

प्राचीन भारतीय आर्यों के आचार–विचार, रहन–सहन, धर्म–कर्म को सम्यक् प्रकार से जानने के लिए वेदों का ज्ञान आवश्यक है। वेद मन्त्रों का साक्षात्कृत धर्मा ऋषियों ने सर्वप्रथम दर्शन किया (साक्षात्कृत धर्माणः ऋषयो वभूवुः)। वेद शब्द √विद् धातु से ज्ञानार्थक में घञ् प्रत्यय करने से निष्पन्न होता है। इस का साहित्य अथाह है, विशालाति–विशाल है। वेद चार हैं – ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद।

वैदिक संहिताओं के अतिरिक्त ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् भी उपलब्ध हैं। इतने व्यापक साहित्य की समूची जानकारी सीमित काल में नितान्त असम्भव है। वेद के अध्ययन के लिए वेदों के छः अङ्गों (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द तथा ज्यौतिष) का ज्ञान भी होना आवश्यक है। वेदाङ्ग द्वारा ही वेदों को समझने में सहायता मिलती है।

वेदाङ्गों में कल्पसूत्र का अपना पृथक् स्थान है। कल्पसूत्र वेद विहित कर्मों का क्रमपूर्वक वर्णन करने वाला अङ्ग है। यज्ञानुष्ठान आदि की दृष्टि से इसका महत्त्व सर्वोपरि है। कल्पसूत्रों में श्रौत, गृह्य, धर्म और शुल्वसूत्र हैं। श्रौत कर्मों का विधान श्रौतसूत्रों में है। गृहस्थ या पुरोहित द्वारा गृह्याग्नि में सम्पाद्यमान कर्म–विधानों का वर्णन गृह्यसूत्रों में प्राप्त है (गृह्यसूत्रों में इन्हीं गृह्य अर्थात् स्मार्ताग्निसाध्य कर्मों का निरूपण है।

धर्मसूत्रों में वर्णाश्रम–धर्म का विधान है। श्रौतकर्म के अनुष्ठान में हुए अपराध या दोष के परिमार्जन के लिए प्रायश्चित्त करना आवश्यक है। बहुविध प्रायश्चित्तों का संग्रह प्रायश्चित्त सूत्रों में है।

शुल्व सूत्रों में अग्न्यातन, विहार, वेदि, पृभृति के विधिवत् निर्माण की विधि वर्णित है।

धर्मसूत्र भी अन्य ग्रन्थों के समान भिन्न–भिन्न शाखाओं के पृथक्–पृथक थे किन्तु कतिपय धर्मसूत्र ही इस समय उपलब्ध हैं। जिन शाखाओं के सभी कल्पसूत्र उपलब्ध हैं उनमें प्रमुख हैं – बौधायन, आपस्तम्ब और हिरण्यकेशि।

आपस्तम्बधर्मसूत्र का सम्बन्ध कृष्ण–यजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा से है। आपस्तम्बीय कल्प के 30 प्रश्नों में से 28वें तथा 29वें प्रश्नों को आपस्तम्बधर्मसूत्र के नाम से अभिहित किया गया।

आपस्तम्बधर्मसूत्र में अनेक विषयों का प्रतिपादन किया गया है। धर्मसूत्रों के नियमों की रचना वेद की मान्यताओं के अनुसार हुई है। इस धर्मसूत्र में धार्मिक यज्ञ, होम, वर्ण–धर्म, आश्रम–धर्म, उपनयन, वेदाध्ययन, राजतन्त्र, विवाह, स्त्री की स्थिति, नियोग, अतिथि–सत्कार, श्राद्ध, मोक्ष, श्रेयस् आदि विषयों पर विचार किया गया है।

मानवमात्र की धार्मिक धारणा को जागृत करने व नियम–आचरण का परिपालन करने व उत्तम मार्ग के प्रशस्त करने के उद्देश्य से आपस्तम्बधर्मसूत्र के सम्यक् अध्ययन की आवश्यकता प्रतीत हुई।

आपस्तम्बधर्मसूत्र पर शोध–कार्य अपेक्षित होने के परिणामस्वरूप मेरे मन में आपस्तम्बधर्मसूत्र के अध्ययन हेतु जिज्ञासा उत्पन्न हुई। मेरी जिज्ञासा तथा अभिरुचि को ध्यान में रखकर मेरे परम श्रद्धेय निर्देशक डॉ0 वीरेन्द्र कुमार मिश्र जी ने आपस्तम्बधर्मसूत्र एक अनुशीलन विषय को अनुसन्धान हेतु अनुमोदित किया। प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध उन्हीं के दिशा निर्देश एवं प्रेरणा का परिणाम है।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध को सैकर्य की दृष्टि से नौ अध्यायों में विभाजित किया गया है।

प्रथम अध्याय में धर्मसूत्र एक सामान्य परिचय मे वैदिक वाङ्मय की महत्ता, वेदाङ्ग साहित्य में कल्पसूत्रों के अन्तर्गत धर्मसूत्र साहित्य का परिचय, उद्भव, धर्मसूत्रों

की संख्या, प्रत्येक धर्मसूत्र का विशेष विवरण, यजुर्वेदीय धर्मसूत्र तथा आपस्तम्बधर्मसूत्र काल एवं वर्ण्य–विषय का प्रतिपादन किया गया है।

द्वितीय अध्याय के अन्तर्गत धर्म–विवेचन, धर्म शब्द का तात्पर्य, स्वरूप एवं आचरण, यज्ञ एवं उसका स्वरूप, यज्ञ के प्रकार, होम एवं बलि–कर्म का विशद विवेचन है।

तृतीय अध्याय आश्रम–व्यवस्था वर्णन, ब्रह्मश्चर्य आश्रम–वर्णन, गृहस्थ आश्रम का वर्णन, वानप्रस्थ–आश्रम वर्णन तथा संन्यास आश्रम का विषयक है।

चतुर्थ अध्याय में वर्ण–व्यवस्था वर्णित है। इसमें चातुवर्ण्य कल्पना धर्म एवं उसके कर्त्तव्य, ब्राह्मण–वर्ण–धर्म एवं उसके कर्त्तव्य, वैश्य–वर्ण–धर्म एवं उसके कर्त्तव्य, शूद्र–वर्ण–धर्म एवं उसके कर्त्तव्य का विशेष रूप से आपस्तम्ब धर्मसूत्र के अनुसार विवेचन किया गया है।

पंचम अध्याय में संस्कार निरूपण, संस्कारों में मुख्यतः उपनयन, वेदाध्ययन, समावर्त्तन, व्रात्य एवं उसका संस्कार, विवाह एवं अन्त्येष्टि संस्कार के विष्यों एवं महत्त्व का विशेष रूप से विवेचन किया गया है जो कि इस धर्मसूत्र पर आधारित है।

षष्ठ अध्याय में श्राद्ध का अर्थ एवं महत्त्व, श्राद्ध की तिथि, श्राद्धीय ब्राह्मण, उनकी योग्यता व संख्या, श्राद्धकालीन होम, श्राद्ध के भोज्यपदार्थ, श्राद्ध का फल आदि विषयों की आपस्तम्बधर्मसूत्र के आधार पर विवेचना की गई है।

सप्तम अध्याय में राजा एवं राजतन्त्र, राजा शब्द की व्युत्पत्ति, सेवक कर एवं दण्ड आदि पर वर्णन विशेष रूप से वर्णन किया गया है।

अष्टम अध्याय में प्रायश्चित्त विवेचन जिसके अन्तर्गत वध विषयक प्रायश्चित्त मानव–वध, पशु–वध, चौर कर्म विषयक प्रायश्चित्त, गुरुपत्नीगमन प्रायश्चित्त आदि का गहनता से अध्ययन किया गया है तथा इनका विशद वर्णन किया गया है।

नवम अध्याय जिसमें विविध विषय विवेचनात्मक हैं जिसमें योग का वर्णन है। योग शब्द का अर्थ एवं उसके उपदेश आत्मा ज्ञान की महत्ता, आत्मा का स्वरूप, आत्मा ज्ञान से

मोक्ष–प्राप्ति, अतिथि–सत्कार, श्रेयस्–प्राप्ति निमित्त आचरण, दान, भक्ष्य–अभक्ष्य विचार, नियोग–वर्णन, आशौच–वर्णन है।

नवम अध्याय के बाद सहायक सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची का उल्लेख है।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध के पूर्ण करने में मैं अपने निर्देशक महोदय का आजीवन आभारी रहूँगा जिन्होंने मुझे विद्वतापूर्ण परामार्श प्रदान किया। इससे मुझे भावी जीवन क्षेत्र में भी अवलम्ब मिलता रहेगा।

इसी उपलक्ष्य में मैं अपने स्व0 पिता श्री बाला नन्द शर्मा को प्रणाम करता हूँ जिन्होंने मेरी वेदाध्ययन के प्रति बाल्यकाल से ही अभिरुचि उत्पन्न की। वे वेद विद्या के स्वयं पुजारी थे, नित्यप्रति मन्त्रोच्चारण करने से मेरे मन की भावना बलवती होती गई। मैं अपनी माँ श्रीमती झूंगी देवी के प्रति ऋणी हूँ जिन्होंने मेरे बाल्यकाल से ही अध्ययन के समय में मेरी हर प्रकार से सहायता की। मैं अपनी बहनों श्रीमती पदमु देवी, हरि देवी, कमला देवी व आशा देवी जिन्होंने मुझे घरेलू समस्याओं से अध्ययन के लिए मुक्त रखा साथ में अपनी पुत्री मंजु प्रवीण शर्मा जिसने मेरे शोध–कार्य में मेरी सेवा की व प्रूफ रीडिंग का कार्य भी किया तथा पुत्र महीपाल शर्मा एवं अपनी पत्नी राधा देवी शर्मा का भी आभारी हूँ जिन्होंने मुझे इस कार्य के लिए प्रोत्साहित किया तथा गृहस्थी की अनेकानेक समस्याओं से मुक्त रखा। इसी के साथ में श्री भागमल सरैईक, अवकाश प्राप्त अध्यापक का व उनकी धर्मपत्नी श्रीमती शान्ति देवी का हृदय से धन्यवाद करता हूँ जिन्होंने मुझे इस कार्य में धन आदि का भी सहयोग दिया।

साथ में हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय के संस्कृत–विभाग के गुरुजनों का भी अभारी हूँ जिन्होंने सद्व्यवहार से मेरे प्रति सहानुभूति बनाये रखी। मैं श्री कृष्णलाल खाची का विशेष रूप से धन्यवाद करता हूँ जो मुझे पुस्तक सम्बन्धी हर प्रकार की सहायता करते रहे। अन्त में श्रीमती कृष्णा का भी आभारी हूँ जिन्होंने व्यस्तता में भी समय निकालकर टंकन कार्य किया।

आचार्य हरि लाल शर्मा